Journal of Frontiers in Multidisciplinary Research

'एकात्म मानवतावाद': समकालीन भारत में प्रासंगिकता

पूजा
पी-एचडी छात्रा, सेंटर फॉर इंटरनेशनल पॉलिटिक्स, ऑर्गनाइजेशन एंड डिसार्मामेन्ट, स्कूल फॉर इंटरनेशनल स्टडीज, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

* Corresponding Author: **पूजा**

Article Info

E-ISSN: 3050-9726
P-ISSN: 3050-9718
Impact Factor (RSIF): 7.34
Volume: 07
Issue: 01
Received: 06-04-2026
Accepted: 04-05-2026
Published: 02-06-2026
Page No: 523-526

सारांश
पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के द्वारा प्रतिपादित एकात्म मानवतावाद की अवधारणा बहुत ही अधिक प्रचलित हुई जो प्रमुख रूप से इस तर्क पर आधारित थी कि मानवीय एकता ही सम्पूर्ण सृष्टि का आधार है! व्यक्ति से ही गाँव, समाज, राज्य, राष्ट्र एंव, समस्त संसार का निर्माण होता है! अतः व्यक्ति को सदैव केंद्र में रखकर ही राष्ट्र निर्माण होना चाहिए! पंडित उपाध्याय जी अपने मानववाद की अवधारणा में धार्मिक एवं नैतिक तत्वों को जोड़ते हैं! उनका मानवतावाद मनुष्य में विभाजन को स्वीकार नहीं करता एंव उनका दर्शन इस धारणा पर आधारित है कि हिंदू संस्कृति भौतिक और अध्यात्म के जीवन मूल्य को प्रोत्साहित करती है!
इस लेख का उद्देश्य पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के एकात्म मानवतावाद की अवधारणा का समकालीन भारत में अवलोकन करना है! जिन विचारों को उनके द्वारा स्थापित किया गया, क्या उन्हें वर्तमान भारत में भी प्रासंगिक माना जा सकता है?

DOI: https://doi.org/10.54660/.JFMR.2026.7.1.523-526

Keywords: पंडित दीनदयाल उपाध्याय, एकात्म मानवतावाद, भारत!

परिचय

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी, भारतीय राजनीति के प्रखर नेता, समाजसेवी, एवं दार्शनिक थे! इनका जन्म 25 सितंबर, 1916 को उत्तर प्रदेश, के मथुरा ज़िले में नगला चंद्रभान नामक गाँव में हुआ था! था। इन्होंने पिलानी, आगरा और प्रयाग से अपनी शिक्षा पूरी की। स्नातक की पढ़ाई के दौरान ही वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से जुड़ गए और कॉलेज छोड़ने के तुरंत बाद ही संघ के प्रचारक बन गए। अपने संक्षिप्त जीवनकाल के दौरान इन्होंने राजनीतिक, दार्शनिक, पत्रकारिता, एवं लेखन क्षेत्र इत्यादि में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये। दीनदयाल उपाध्याय जी के द्वारा कई महत्तवपूर्ण विचारों का प्रतिपादन किया गया था उदहारण के लिए, एकात्म मानवतावाद की अवधारणा, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर विचार इत्यादि!

पंडित दीन दयाल उपाध्याय का जीवन दुर्भाग्य से कठिन और भीषण रहा है। लेकिन अपने परेशानी भरे निजी जीवन के बावजूद, उन्होंने हमेशा अपने शिक्षाविदों में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया। उनकी बौद्धिक उपलब्धिया असंख्य और प्रशंसनीय थी। अपनी उच्च शिक्षा के लिए दीनदयाल कानपुर गए और अंग्रेजी साहित्य में कला स्नातक की पढ़ाई के लिए सनातन धर्म कॉलेज में दाखिला लिया। यहीं कॉलेज के छात्रावास में सुंदर सिंह भडारी और बलवंत महाशब्दे से उनकी दोस्ती हो गई, जिनके आग्रह पर उन्होंने आर एस. एस. संगठन में प्रवेश किया। पंडित दीन दयाल उपाध्याय,1937 में डॉ. हेडगेवार (आर.एस.एस. के संस्थापक) के संपर्क में आए और धीरे-धीरे संगठन की गतिविधियों के लिए समय देना शुरू कर दिया। प्रथम श्रेणी के साथ स्नातक उत्तीर्ण करने के बाद वे अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर करने के लिए आगरा के सेंट जॉन कॉलेज गए, उन्होंने अपने चाचा राधा रमन के आग्रह पर प्रशासनिक सेवा परीक्षा सफलतापूर्वक दी। इंटरव्यू के दौरान धोती, कुर्ता और टोपी पहनने को लेकर उनका मजाक उड़ाया गया था। यह पहली बार था जब उन्हें पंडितजी कहा गया, हालांकि बाद में उनके जीवन में उनके अनुयायियों द्वारा स्नेह के साथ इसका इस्तेमाल किया गया था। प्रशासनिक रोवा में चुने जाने के बाद भी उन्होंने सरकारी सेवाओं में शामिल होने से इनकार कर दिया क्योंकि उन्हें सरकार की सेवा करने में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

तत्पश्चात् पंडित दीनदयाल जी ने लखनऊ में राष्ट्र धर्म प्रकाशन नामक संस्थान की स्थापना की और यहां से "राष्ट्र धर्म" नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया। सन 1950 में डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुख़र्जी ने प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया और देश में एक वैकल्पिक राजनीतिक मंच के सृजन के लिए श्री गोलवलकर जी से आदर्शवादी और देशभक्त नौजवानों को उपलब्ध कराने के लिए सहायता मांगी। इस राजनीतिक घटनाक्रम में दीनदयाल जी ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। दिनांक 21 सितंबर, 1951 के ऐतिहासिक दिन उन्होंने उत्तर प्रदेश में एक राजनीतिक सम्मेलन का सफल आयोजन किया। इसी सम्मेलन में देश में एक नए राजनीतिक दल भारतीय जनसंघ की राज्य इकाई की स्थापना हुई। इसके एक माह के बाद 21 अक्टूबर,1951 को डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुख़र्जी ने भारतीय जनसंघ के प्रथम अखिल भारतीय सम्मेलन की अध्यक्षता की।

पंडित दीनदयाल जी उस परंपरा के वाहक थे जो नेहरु के भारत नवनिर्माण की बजाय भारत के पुनर्निर्माण की बात करती है। भारत में ज्ञान के प्रसार-प्रचार एवं संचार की प्रणाली के रूप में कथा और उपदेश पद्धति को पुरातनकाल से स्वीकार्यता प्राप्त है। भगवद् गीता में श्रीकृष्ण ने गीता का ज्ञान उपदेश की पद्धति से दिया तो भगवान बुद्ध ने भी ज्ञान के प्रसार का माध्यम उपदेश को ही बनाया।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय: एकात्म मानवतावाद की अवधारणा

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने अपने चिन्तन एकात्म मानववाद को सृजित किया और स्पष्ट किया कि एकात्म मानवदर्शन का अर्थ है मानव जीवन तथा सम्पूर्ण प्रकृति के एकात्म सम्बन्धों का दर्शन। यद्यपि यह सत्य है कि मानव-जीवन के विविध अंगोपांगों तथा मानव प्रकृति की विभिन्न शक्तियों में विविधता होती है। किन्तु यह विविधता आन्तरिक एकता के ही विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति हुआ करती है। इसलिए इन सब में पारम्परिक अनुकूलता और पूरकता होती है। एकात्म मानववाद के रूप में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने भारत की तत्कालीन राजनीति और समाज को उस दिशा में मुड़ने की सलाह दी है, जो सौ फीसदी भारतीय है। एकात्म मानववाद के इस वैचारिक दर्शन का प्रतिपादन पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने मुंबई में 22 से 25 अप्रैल, 1965 में चार अध्यायों में दिए गए भाषण में किया। इस भाषण में उन्होंने एक मानव के संपूर्ण सृष्टि से संबंध पर व्यापक दृष्टिकोण रखने का काम किया था। वे मानव को विभाजित करके देखने के पक्षधर नहीं थे। वे मानवमात्र का हर उस दृष्टि से मूल्यांकन करने की बात करते हैं, जो उसके संपूर्ण जीवनकाल में छोटी अथवा बड़ी जरूरत के रूप में संबंध रखता है। दुनिया के इतिहास में सिर्फ 'मानव-मात्र' के लिए अगर किसी एक विचार दर्शन ने समग्रता में चिंतन प्रस्तुत किया है तो वो एकात्म मानववाद का दर्शन है। पं. दीनदयाल उपाध्याय जी ने भारतीय संस्कृति, व्यक्ति और समाज, राजनीति और अर्थनीति को एकात्म मानववाद के चिंतन दृष्टि का आधार तय किया। उनके सिद्धांत का आधार सम्पूर्ण मानव का ज्ञान है, जो उपलब्धियों से संकलित है। उनके तत्वों पर विचार करते समय वे इस बात पर बल देते हैं कि जो हमारा है उसे युगानुकूल बनायें तथा जो बाहर का है उसे देशानुकूल बनाकर विचार करें।' सम्पूर्ण समाज का 'ऐतिहासिक विकास' और 'राष्ट्रीय चरित्र' राजनीतिक संस्कृति का प्रत्यय हैं। मानवता इसका आधारभूत पक्ष है।

भारत में मानववाद के आधारभूत तत्व पर विचार करने के लिए गाँधी, लोहिया और दीनदयाल के विचारों को प्रतिनिधि विचार रूप के उल्लेख करना उचित होगा। यह उल्लेख भारत के संदर्भ में तत्वों को समझने के उद्देश्य मात्र से उल्लिखित है। गांधीजी के मानववादी चितन-विचार का उपसहार डार्विन के उच्चतम लोगों के जीवन' के लिए त्याग और हाब्स की अवधारणा, प्रत्येक का संघर्ष प्रत्येक से, के विरुद्ध सत्याग्रह पर आधारित है। यह बन्धुत्व, प्रेम, परस्पर सहयोग, संबंध एवं अहिसा के चतुष्कोणीय विधा का मजबूत बधन है। गांधीजी का मानववाद एकतरफ बहुधार्मिक और नैतिक अवधारणाओं पर स्थिर है तो दूसरी ओर पश्चिम के आधुनिक और उदारवादी अवधारणाओं का मिश्रण है। सत्याग्रह का विचार रखते हुए गाँधी प्रतिपादित करते है कि उनका दिमाग ब्रिटिश साम्राज्यवाद से संघर्ष करते समय किसी ब्रिटिश से शारीरिक संघर्ष का नहीं है। उनकी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक अवधारणा की दृष्टि समग्र मानव समुदाय के बिना किसी भेद-भाव एवं अवरोध के कल्याण की रही है।

गाँधीजी से पृथक डॉ. राम मनोहर लोहिया ने धर्म और अध्यात्म से अलग सैद्धान्तिक विचार प्रस्तावित किया। उनका समाजवाद ही मानववाद है। वे कहते हैं, "हमने समाजवाद, स्वतंत्रता और अहिसा जो हमारे देश के सुन्दर सत्य है, के संयुक्त स्वरूप को देखा है। लम्बे समय तक समाजवाद को वैरभाव के रूप में परखा गया। समाजवाद के दुबले-पतले हंडी को मसलकर अहिंसा के साथ मिश्रित कर उसे मोटा बनाया जाय तथा सहानुभूति के साथ विवाह रचाया जाय। डॉ. लोहिया गरीब लोगों और देश के गरीबी से अत्यधिक क्षुब्ध रहे है उनका मानना था कि विश्व के दो-तिहाही लोग खतरनाक गरीबी से संत्रस्त है। फलतः डॉ. लोहिया पूरे विश्व के लिए चार सूत्रीय आयोजन की आवश्यकता पर बल देते है। इस कारण वे पूरे विश्व में पर्याप्त रूप में आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति, सभी देशों की स्वतंत्रता, सभी जातियो की समानता और पूर्ण निरस्त्रीकरण के पक्षधर थे। इसका आचार्य कृपलानी समर्थन करते हुए कहते है कि वस्तुत उन्होंने प्रत्येक कदम गाथी के सिद्धांत के अनुरूप बढ़ाया है। सूत्रीय आयोजन की आवश्यकता पर बल देते हैं। इस कारण वे पूरे विश्व में पर्याप्त रूप में आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति, सभी देशों की स्वतंत्रता, सभी जातियों की समानता और पूर्ण निरस्त्रीकरण के पक्षधर थे। इसका आचार्य कृपलानी समर्थन करते हुए कहते है कि वस्तुत उन्होंने प्रत्येक कदम गांधी के सिद्धांत के अनुरूप बढ़ाया है।

गाँधी और लोहिया से प. दीनदयाल उपाध्याय का मानववाद पूर्णतया भिन्न है। वे गांधीजी के तरह मानववाद में धार्मिक और नैतिक तत्वों को जोड़ते हैं। उसे वे एकीकृत मानववाद कहते हैं। विभिन्न संस्कृतियों के अवदान एवं मानव धर्म के विश्वास के आधार पर वे विश्व राज्य की कल्पना करते हैं। उनके मानववाद का विचार-दर्शन इस तर्क पर आधारित है कि 'हिन्दू संस्कृति भौतिक और अध्यात्म के जीवन मूल्य को प्रोत्साहित करती है।" इसके लिए वे पुरुषार्थ (मानव प्रयास) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के समन्वित मार्ग का सुझाव देते हैं। अर्थ और कर्म को धर्म संचालित करता है। दोनों परस्पर संबंधित एवं परस्पर पूरक हैं। अकेले में मोक्ष आत्मा की संतुष्टि के लिए पर्याप्त नहीं है।" वे रिलीजन को मात्र पद्धति कहते हैं जबकि धर्म पूजा पद्धति का विचार किये बगैर सभी के लिए शुभ का साधन है तथा रक्षा का मार्ग भी है। धर्म लोक या जनसमुदाय को धारण करता है। लोकधारणा के कारण सामाजिक नियमबद्धता के साथ कुछ नैतिक तात्पर्य भी परिगृहीत हो जाता है। जिस धर्म की वे बात करते है वह सर्वोच्च है, यहां तक कि सरकार, आमजन या बहुमत से भी। वे मार्क्स के शोषित, गरीब एवं पिछड़े वर्ग के दयावानभाव से प्रभावित थे किंतु उसे अधूरा मानते थे, मार्क्स के सिद्धांत के अनुसार प्रदत्त स्वतंत्रता-योजना के प्रति उनको भय था। पं. दीनदयाल जी के समन्वित मानववाद का प्रारूप सभी के लिए एक सादृश्य चतुर्दिक विकास की योजना थी।

प. दीनदयाल जी का मन्तब्य था कि पिछली शताब्दियों के आर्थिक चिंतन और उस पर आधारित अर्थव्यवस्था का यह परिणाम हुआ

कि हाड़-मांस का वास्तविक मानव हमारी दृष्टि से ओझल हो गया है। पूँजीवादी अर्थशास्त्री मनुष्य को एक अर्थ लोलुप प्राणी मानकर चलता है। उसके सभी निर्णय आर्थिक दृष्टिकोण से होते हैं। ऐसे व्यक्ति के सामने पाच रूपये सदैव चार रूपये से अधिक होते हैं। जहाँ पूँजीवादी अर्थरचना है वहाँ आर्थिक लक्ष्य उसका उद्देश्य है। ऐसी अवस्था में वह प्रतिस्पर्धा को कोसता है तथा दूसरे पर नियंत्रण को अन्याय बताकर एकाधिकार द्वारा मनमाने कीमत वसूलने का तरीका तय करता है। किंतु, पं. दीनदयाल जी ने व्यक्ति को एकांगी की तुलना में बहुरंगी कहा। राज्य के समान और संस्थायें भी आवश्यकतानुसार समय-समय पर पैदा होती है। व्यक्ति एक नही अनेक अंगो का सदस्य है। समाज स्वयंभू है, राज्य उसकी संस्था है। व्यक्ति राष्ट्र की आत्मा को प्रकट करने का एक साधन है तथा राष्ट्र का उपकरण है। आत्मा के आधार पर राष्ट्र खड़ा होता है। यह राष्ट्र के प्रत्येक श्रेष्ठ व्यक्ति के आचरण द्वारा प्रकट होती है।"

भारतीय एवं पश्चिमी मानवतावाद में अंतर

समाज के बारे में भारतीय एकात्म दर्शन पाश्चात्य धारणा से भिन्न है। भारतीय चिन्तन दृष्टि समाज को स्वयंभू मानती है। इसका मानना है कि जिस प्रकार व्यक्ति पैदा होता है उसी प्रकार समाज भी पैदा होता है। समाज प्रकृतिक है व्यक्ति द्वारा निर्मित नहीं। समाज स्थापित करने का न तो कोई निवेदन पत्र है और न ही किसी सभा के निर्णय के उपरान्त पंजीकरण की व्यवस्था से निर्मित है। समाज एक सहज केन्द्रीय जैविक सृष्टि है। समाज कृत्रिम मानवीय उपायों से न तो यह बनता और न ही नष्ट होता है। वास्तव में समाज एक ऐसी सत्ता है जिसकी अपनी आत्मा है जिसका अपना एक जीवन है। समाज की भी व्यक्ति की ही भाँति शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा होती है। (Susheel kumar Tripathi) पश्चिमी विचारधारा में मानवता को एक श्रम क्षेत्र का ईकाई माना जाता है कि मानव अपने व्यक्तिगत जीवन को व्यतीत करने के लिए एक यंत्रवत वस्तु है, परन्तु भारतीय समाज में मानवता की परिभाषा ही अलग है।

एकात्म मानववाद के सिद्धात से प दीनदयाल उपाध्याय ने विचारधारा के द्वन्द्र में भारत किधर जाये या जानेवाला है?" इस गुढ़तर प्रश्न का जवाब दिया। पश्चिमी विचारधारा से हमारी समस्या का समाधान मिल सकता है, इस विचारधारा का उन्होंने न केवल खण्डन किया अपितु त्याज्य योग्य बताया। स्वतंत्रता के बाद देश ने लोकतंत्र को सत्ता के लिए स्वीकार किया और काग्रेस सत्ताईस वर्ष तक लगातार केन्द्र की सत्ता पर आसीन भी रही। इसके बाद सत्ता में बने रहने के लिए आमजन के लिए कल्याणकारी राज्य, समाजवाद, उदारमतवाद का पथ अपनाया। प दीनदयाल जी इसे मात्र नारा मानते है तथा कार्यक्रम और विचारधारा की कसौटी पर इसे कोरी बात या मिथ्या प्रलोभन कहते है। इसके विकल्प के रूप में उन्होंने एकात्म मानववाद का दर्शन प्रतिपादित किया। इस निमित्त उन्होंने दो महत्त्वपूर्ण बातें कही। प्रथम, हमे समाजवाद अथावा पूँजीवाद नहीं, बल्कि 'मानव' का उत्कर्ष और सुख चाहिये और द्वितीय, समाजवाद और पूँजीवाद न तो मानव को समझ सका है और न उन्हे मानव की चिता है। आज वे दोनों मानव को दाव पर लगा कर लड़ रहे है। पश्चिम की राजनीति अभी तक राष्ट्रीयता, प्रजातंत्र समता या समाजवाद के आदर्शों को मानकर चल रही है।

प. दीनदयाल जी ने "अन्धेन नीयमाना यथान्धाः" के पश्चिम पथ का त्याग कर स्वय का मार्ग अपनाने पर जोर दिया। उनका मत है कि हमारी अपनी प्रकृति है अत हम अन्धानुकरण नहीं कर सकते और न तो प्रजातंत्र में व्यक्ति स्वातंत्र्य का शोषण और पूँजीवादी व्यवस्था में साधनों के केन्द्रीयकरण के गन्दे स्थिति को मूक दर्शक, होकर देख सकते है। इन समस्याओं का निदान प दीनदयाल जी ने 'एकात्म मानववाद दर्शन के माध्यम से प्रस्तुत किया। भारतीय राजनीति और अर्थनीति विषय पर पं. दीनदयाल जी द्वारा प्रस्तावित एकात्म मानववाद का दर्शन जहाँ उनकी आत्मचितन से युक्त स्फूर्त चेतना है वहीं राजनीतिक व्यवस्था के लिए निरीक्षित पद भी है।

वर्तमान भारत में एकात्म मानवतावाद की प्रासंगिकता

यदि वर्तमान भारत में एकात्म मानववाद की प्रासंगिकता की बात की जाए तो इसे निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है। आज विश्व की एक बड़ी आबादी गरीबी में जीवन यापन कर रही है। विश्वभर में विकास के कई मॉडल लाए गए लेकिन आशानुरूप परिणाम नहीं मिला। अतः दुनिया को एक ऐसे विकास मॉडल की तलाश है जो एकीकृत और संधारणीय हो। एकात्मक मानववाद ऐसा ही दर्शन है जो अपनी प्रकृति में एकीकृत एवं संधारणीय है। एकात्म मानववाद का उद्देश्य व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकता को संतुलित करते हुए प्रत्येक मानव को गरिमापूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। यह प्राकृतिक संसाधनों के संधारणीय उपयोग का समर्थन करता है जिससे कि उन संसाधनों की पुनः पूर्ति की जा सके। एकात्म मानववाद न केवल सामाजिक-आर्थिक स्वतंत्रता को बढ़ाता है अपितु राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्वतंत्रता को भी बढाता है। इस प्रकार यह सिद्धान्त विविधता को प्रोत्साहन देता है। अतः भारत जैसे विविधतापूर्ण देश के लिए यह सर्वाधिक उपयुक्त है।

व्यक्ति परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता है, बदले में परिवार उसके अधिकारों की रक्षा करता है। परिवार समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता है, बदले में समाज उसके अधिकारों की रक्षा करता है। समाज राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता है, बदले में राष्ट्र उसके अधिकारों की रक्षा करता है और राष्ट्र विश्व के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता है, बदले में विश्व उसके अधिकारों की रक्षा करता है। इस प्रकार व्यष्टि से समष्टि और समष्टि से परमेष्टि तक संपूर्ण मानव-जाति अन्योन्याश्रित भाव से एक-दूसरे से जुड़ी है, एक-दूसरे पर निर्भर है। कोई किसी से विलग नहीं, कोई किसी से निरपेक्ष, स्वतंत्र या पृथक नहीं। संपूर्ण चराचर में व्याप्त उस एक ही सत्य या परम तत्त्व को पाने और देखने का दूसरा नाम ही एकात्म मानव दर्शन है। दरअसल एकात्म मानव दर्शन भारत की सनातन संस्कृति एवं सदियों से चली आ रही चिरंतन जीवन पद्धत्ति की युगीन व्याख्या है। परस्पर सहयोग की भावना एवं ऊपरी भेदभाव से इतर कहीं गहरे में आंतरिक एवं तात्त्विक तौर पर एक-दूसरे से जुड़े होने के इस एकात्म भाव के कारण ही यह दर्शन वर्चस्ववादी, विस्तारवादी एवं साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों एवं महत्वकांक्षाओं पर विराम लगा विश्व-बंधुत्व की भावना को सच्चे एवं वास्तविक अर्थों में साकार करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार दीन दयाल जी का चिन्तन यह दर्शाता है कि व्यक्ति और समाज में विरोध मानना भूल है। विकृतियों अथवा अव्यवस्था पर चिंतन करना अपने स्थान पर उचित है, पर मूल सत्य यही है कि व्यक्ति और समाज अभिन्न बनाने और विकास करने में सब प्रकार की स्वतंत्रता देने का काम समाज का है। अन्ततः पं० दीनदयाल उपाध्याय के विचारों के प्रति आग्रह रखते हुए आयातित विचाराधाराओं तंत्र से निकलकर अन्त्योदय के लक्ष्य और मानव एकात्मवाद के वैचारिक सिद्धान्त को आत्मसात करके ही भारतीयता के मूल स्वरूप में मानव कल्याण के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. उपाध्याय दीनदयाल। विचार-दर्शन। खण्ड-1। ठेंगड़ी दत्तोपंत, संपादक। नई दिल्ली: सुरूचि प्रकाशन; नि.वि।

2. उपाध्याय दीनदयाल। विचार-दर्शन। नेने वी.वा., संपादक। नई दिल्ली: सुरूचि प्रकाशन; नि.वि।
3. सरावगी राजीव कुमार। एकात्म मानव दर्शन: एक समीक्षात्मक अध्ययन। नि.प्र.: नि.प्र.; नि.वि।
4. नेने विनायक वासुदेव। पं. दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन। भाग-2। नई दिल्ली: सुरूचि प्रकाशन; 1993।
5. त्रिपाठी सुशील कुमार, सिंह रवि प्रकाश। एकात्म मानववाद और पं. दीनदयाल उपाध्याय। कानपुर: काव प्रकाशन; 2016।
6. परमेश्वरन पी, संपादक। गाँधी, लोहिया एण्ड दीनदयाल। नई दिल्ली: दीनदयाल रिसर्च संस्थान; 1978।
7. उपाध्याय दीनदयाल। भारतीय अर्थनीति: विकास की एक दिशा। लखनऊ: लोकहित प्रकाशन; 1998।
8. सिंह शरद। दीनदयाल उपाध्याय। नई दिल्ली: सामयिक पेपरबैक्स; 2016।
9. धुलिपुडी पंडित संतश्री। इन्टीग्रल ह्यूमनिज्म फॉर समकालीन भारत। नई दिल्ली: द संडे गार्जियन; 2024।
10. भारतीय जनता पार्टी। भारतीय जनसंघ के सह-संस्थापक पंडित दीनदयाल उपाध्याय। नई दिल्ली: भारतीय जनता पार्टी; नि.वि।
11. ठेंगड़ी दत्तोपंत। एकात्म मानववाद: एक अध्ययन। उत्तर प्रदेश: भारतीय संस्कृति पुनरुत्थान समिति; 1970।
12. देवधर विश्वनाथ नारायण। पंडित दीनदयाल उपाध्याय: विचार-दर्शन। खण्ड-7, व्यक्ति दर्शन। नई दिल्ली: सुरूचि प्रकाशन; 2014।
13. उपाध्याय दीनदयाल। एकात्म मानववाद। 9वाँ संस्करण। नोएडा: जागृति प्रकाशन; 2008।
14. दाण्डवते मधु। गाँधी, लोहिया एवं दीनदयाल। प्रथम संस्करण। नई दिल्ली: दीनदयाल रिसर्च संस्थान; 1978।
15. उपाध्याय दीनदयाल। राष्ट्र चिंतन। लखनऊ: लोकहित प्रकाशन; 2007।
16. बघेल श्रवण सिंह। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जीवन-दर्शन एवं एकात्म मानववाद दर्शन का रेखांकन। भोपाल: बीएफसी पब्लिकेशन; 2021।
17. सागर कृष्णानंद। दीनदयाल उपाध्याय की वाणी। नोएडा: जागृति प्रकाशन; 2001।
18. द्विवेदी संजय। भारतीयता के संचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय। नई दिल्ली: विजडम पब्लिकेशन; 2015।
19. पटेल नरेंद्र शिवाजी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय: व्यक्तित्व, कृतित्व व नेतृत्व। भोपाल: बीएफसी पब्लिकेशन; 2021।
20. केलकर भालचंद्र कृष्णाजी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन। दिल्ली: सुरूचि प्रकाशन; 2016।